राघवदास कृत-

श्रीशनैश्चरजी की कथा

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन, बम्बई.

॥ श्रीः ॥

अथ राघवदास कृत-

श्रीशनैश्चरजी की कथा

श्रीशनैश्चरस्तवराज, शनैश्चरस्तोत्र
तथा शनिस्तोत्र सहित।

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई.

संस्करण : नवंबर २००२, सम्वत् २०५९.

मूल्य : १० रुपये मात्र।

© सर्वाधिकार : प्रकाशक द्वारा सुरक्षित

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshwar Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi, Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial Estate, Pune 411 013

श्रीशनैश्चराय नमः ।

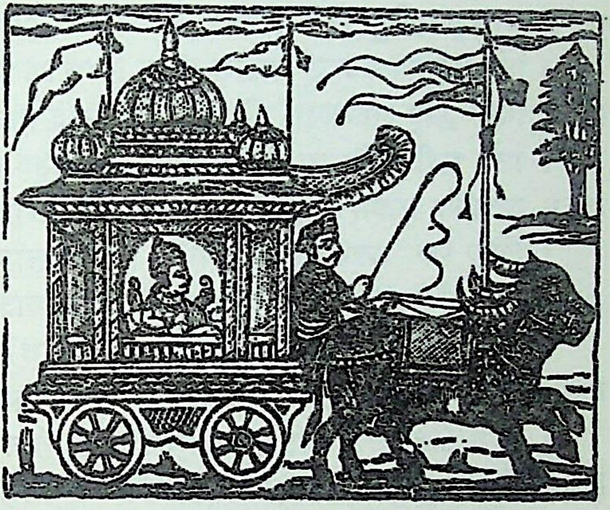

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

अथ श्रीशनैश्चरकथा लिख्यते।

दोहा।

श्रीगणपतिको ध्यानधरि, सरस्वतिको गुण गाय।
कहूं शनैश्चरकी कथा, मेरी बुद्धि सुभाय ॥१॥
उजर बसन वाहन उजल, उज्ज्वल गहनो अंग।
सम दीजै मुहिं सरस्वति, उज्ज्वल बुद्धि उमंग ॥२॥
बंदहुँ जगके कबिनको, हाथ जोरि शिर नाय।
दास जानि मोपर कृपा, करो सकल कबिराय ॥३॥
बालककीसी बानि है, करूं अरज कर जोरि।
दास जानि निजगेहका,काढो जनिक बिखोरि ॥४॥
ग्रंथ संस्कृत ना पढो, प्राकृतको नहिं ज्ञान।
अहिपिंगल भी ना पढो, कहत कबीर सुजान ॥५॥
जाते शुद्धि अशुद्धिको, ठीक परत नहिं मोंहिं।
हँसौ न मेरे काव्यको, ताते बिनऊं तोहिं ॥६॥

–चौपाई –

भेद अगन गनको नहि जानत। दग्धौ आखर नाहिं पिछानत ॥
बरन मातरा छंदहु बिधिबिधि। ताको भेद कियो नहिं मैं सिधि ॥
पिंगल पढो न छंद उपायो। मनोपंगयो ग्रंथ बनायो ॥
मारुत वशीभूत ज्यों प्रानी।आलबाल बकि उठत अज्ञानी ॥

तैसीही मम कविता जानौ । बालकबानी जेम बिकानौ ॥
एक बात यामें है अदभुत । अंक मिलाया शनी देवजुत ॥
जो मेरी बानी नहिं बंदिक । सोहो पुरुष शनिश्चर निंदिक ॥
देव शनैश्चर आज्ञा दीनी । तब रस जान कथा करि लीनी ॥
इसको पाठ प्रात उठि करि है। ताको शनिकी दृष्टि न परि है॥७॥

– दोहा –

सुनी संस्कृतकी कथा, दशरथ शनि संवाद ।
ऋषि वसिष्ठ मुख उच्चरी, तिनकी बुद्धि अगाध॥ ८ ॥
बहुरि सुनी यक बारता, है जगमें विख्यात ।
जिनकी छायामैं करी, विक्रमरविकी बात ॥ ९ ॥
राज करे उज्जैनि नृप, विक्रम उग्र प्रताप।
परदुखभंजन अरिदमन, धर्मधुरंधर आप ॥१०॥
ब्रह्माके मखकुण्डते, प्रकट भये नर चार ।
सोलंखी रु पवार पुनि, चऊहान परिहार ॥११॥

छंद पद्धरी ।

परमार कह्यो जब जगततात। परमारजाति भई तब विख्यात॥
उस वंशमाहिं नृप जन्म लीन। विक्रमादित्य जग सुजस कीन ॥
यक और कथा हम सुनि सुषेन। मघवान पुत्र गंधर्वसेन ॥
तिनको जु इंद्र दीनो सराप। सोई बस्यो आय मृतलोक आप ॥
गर्दभ शरीर तप अप्रमान । सो बस्यो आइ मृतलोक थान ॥
यक हुतो तुमे राजा उदार । जिन व्याहि दई अपनी कुमारि ॥

– चौपाई –

तिनके जनम भरथरी लीनो । बिप्रनेग विप्रनको दीनो ॥
नौबति भेरि बाजि सहनाई । इमि घरघरमें बजी बधाई ॥
दुंदुभि ढोल बजावत ध्यावत । मंगल कलश बनावत गावत ।
मंगलचार पुरीमें कीन्हों । निहचल नाव भरथरी दीन्हो ॥१३॥

– दोहा –

बरस पांच पीछे भयो, विक्रम भानु भुवाल ।
धर्मधुरंधर नीतिमैं, गाय विप्र रखवाल ॥१४॥
ता पीछे यक पुत्रिका, जनमी सुखकी खानि ।
व्याही गौरतिलोकने, देश बंगालो जानि ॥१५॥
ताके गोपीचंद भो, महातपस्वी राज ।
वंश उधार्‍यो आपनो, भक्तनको सिरताज ॥१६॥

– छंद पद्धरी –

उज्जैनि पुरी शिवको सुथान । तहँ राज भरतरि निदान ॥
गोविप्रपाल धर्माधिकार । जिहि पंच लाख हय चलत लार ॥
लूटाक चोर लुकि गये तेमि । ऊलूक सूर ऊंगत जेमि ॥
बटमार उडि गये जिमि विहंग । ठग रहे नाहीं नगरीन संग ॥
सब सुखी बसत जिन राजमाहिं । मृग व्याघ्र फिरत तहुँ एक ठाहिं ॥
गौ सिंह परस्पर घसत अंग । अरु बरहि सर्प इकठोर संग ॥
इहिभांति वर्ष पचीस राज । करि योग लियो सब सरेहु काज ॥
गोरक्षनाथके संग सार । भवसिंधु उतरके गयो पार ॥१७॥

– दोहा –

राजतिलक बिक्रम दयो, सुभटसचिव मिलि आय ।
गादी बैठतही नृपति, पाषंड गये बिलाय ॥१८॥

– छंद पद्धरी –

नृप करत राज संयुक्त नीति । मखहोम करै तपब्रह्मप्रीति ॥
गोविप्रनकी रक्षा करत । नर दुखी दुख देखि हरतसंत ॥
भ्रतखंडमाहिं सासन फिरंत । आज्ञा नहिं मानत सो जरंत ॥
जिनके जू देशमें बरन चार । सुख बसत करत अपनो व्यौहार ॥
इहि भांति राज विक्रम करंत । महा दीनन को दारिद हरंत ॥१९॥

– दोहा –

कंप ध्वजायासी घटन, खैंचत है जु कमान ।
काढत एकदरिद्रको, मथियत दधि मन्थान ॥२०॥

– छप्पय –

ध्वजाकंप घरियाल दंड आदंड नकहियत ॥
कसिये एक कमान पासिद घेटको गहियत ॥
मथियतु दूध मंथान चूरैयत एक दरिद्रहि ॥
विक्रम राज करंत देशमैं नाहिं उपद्रहि ॥
पै लिये नाम यक ईश की फूलमाल पहिरत गरै ॥
शेलियत नाम सिकारको नृपति राज इहिविध करै ॥२१॥

– छन्द पद्धरी –

यक दिवस विक्रमादित्य नरेंद्र । बैठो जु सभा नरलोक इंद्र ॥
अनेक सुभटपंडित अनेक । अनेक सचिव परगद अशेष ॥

अनेक जोतसी जुरे आय । पट्काव्यतणा वक्ता सुभाय ॥
दश आठ कंठ जिनके पुरान । जिन कंठ बसत सुरसति निदान ॥
षट्तीनि ग्रहकी चलियत बात । तब पूछ्त भयो विक्रम विख्यात ॥
चत्र पंचग्रहको भेद मोहिं । इनमांहि बडो ग्रह कवन सोहिं ॥

– पंडित उवाच –

तब पंडित बोले सुनु नृपाल । बसु एक ग्रह सबही दयाल ॥
इनका जु करत पूजन विधान । मनबांछित फल पावत निदान ॥

– राजोवाच –

तब नृपति कहत पंडित प्रवीन । लघु दीरघ सुर हैं प्रबल दीन ॥
सब देव बराबरि होत नाहिं । बड छोट बखानहु सर्वमाहिं ॥

– पंडित उवाच –

भूसुर यक उचरत शुक्रवार । सब ग्रहन माहिं चितको उदार ॥
प्रोहित हिरण्यकशिपू जू कीन्ह । गुरुपद दे द्रव्यहु बहुत दीन ॥
विद्या जु आसुरि अप्रमान । गुरु कियो नृपति कीनो प्रधान ॥
असुरेश हिरनकशिपू महीप । जिनके जु भये प्रहलाद दीप ॥
जिन काज नरहरी रूप धारि । दानव निपात किय उदर फारि ॥
प्रहलाद भक्तकी करि सहाय । प्रभु अंतर्धान भयो सुभाय ॥२२॥

– छन्द त्रोटक –

जिनके जु बिरोचन पुत्र भयो । प्रहलाद गयो बन राज दयो ॥
प्रतप्यो जु बिरोचन देवअरी । जिनके डर कंपत इंद्रपुरी ॥
जिनके जु सहायक शुक्र भये । पुर देवनके सब छीन लये ॥

बरजे मख होम न होय कहां । चलिजाय चमू सजि आप तहां ॥
पटकैं मलमूत्र शिला अगनी । रुच हाडऽरु आमिष धूरि धनी ॥
इह बात बिरोचन बोध करैं । मखबाध हुए सुर बेगि मरैं ॥
यकबार बिरोचन देत सबै । अमरापुर घेरि लई जुं तबै ॥
पुर लूटत वासव आइ गयो । तहँ युद्ध भयानक होत भयो ॥
घरमाहिं बिरोचन जूझि पर्‍यो । बलिको बर देषि तहां प्रजर्‍यो ॥
बलि बासवको जुध फेरि भयो । तब भाजि पुरी मघवान गयो॥
बलि आइ पुरी नृप दाह दियो ।अपने कुलको व्यवहार कियो ॥२३॥

– राजोवाच – सोरठा –

यक छिन गहिय न मौन, फिरि विक्रम नृप बोलियो ॥
शुक्रजिवायो क्यों न, मर्‍यो बिरोचन दैत्य नृप ॥२४॥

– पंडित उवाच – दोहा –

चक्रहु ता शिर उडि पर्‍यो, पर्‍यो उदधिमें आय ।
बाडव अग्नी भष कियो, शिर बिन जियत न काय ॥२५॥
शुक्र पुरोहित दैत्यको, साम धर्म अतिराज ।
बलिराजाको हित कियो, अपनो कियो अकाज ॥२६॥
चक्षुहीन द्विज ह्वैगयो, हीनमंत्र एहिं दीन ।
राजनीतिमें कहत हैं, जे पंडित परबीन ॥२७॥

– राजोवाच – दोहा –

तब विक्रम नृप बोलियो, पंडित कहो बनाय ।
चक्षुहीन किहि भयो, अब मोहिं कथा सुनाय ॥२८॥

– पंडित उवाच – छंद पद्धरी –

पितुबैर मानि बलिराज आप । तब देत भयो देवन सँताप ॥
पृथ्वीपर होम न बेदमंत्र । पावै न होम सुन मंत्र जंत्र ॥
मख आप करत राजाधिराज । इन्द्रासन लेवन आप काज ॥
सुरपतिहि त्रास उपजो अपार । कर जोरि करि हरिसों पुकार ॥
हे परब्रह्म जगि बलि करंत । इन्द्रासन खसन रमाकंत ॥

– श्रीनारायण उवाच –

तब गगनबानि बोलें दयाल । जिनि डरहु दैत्यकुलके खयाल ॥
अवतार धरहुँ में तुमहि काज । छलकरि छलि लेहूं दैत्यराज ॥
इन्द्रहि संतोषि निजपुर पठाय । अवतार धऱ्यो आपन सुभाय ॥
पचास दोय अंगुल प्रमान । झलकत्त तेज जिमि कोटि भान ॥
कुश दंड कमंडलु सिंहचर्म । बरजित उपान ब्रह्मचर्ज धर्म ॥
जर्जर शरीर कंपायमान । बलिद्वार पधारेउ रमाप्रान ॥
गुदराय बात प्रतिहार जाय । यक पोरि खरो तपसी सुभाय ॥
बलिराज कह्यो तुम आन देउ । तब शुक्र लष्यो परब्रह्म भेउ ॥
वामन तब आशिरबाद दीन । बलि उठि तबहीं पदकमल लीन ॥

– बलिरुवाच –

तुम मांगि विप्र मनचाहि बात । मनवांछित पूरहु सकल तात ॥

– श्रीवामन उवाच –

तब वामन ऊतर इमि करेउ । नृप तीन पैंड धरती सु देउ ॥
तहँ निश्चल ह्वै रही हूं नृपाल । तव धर्म बधाऊं सबहि काल ॥

– बलिरुवाच –

तब राजा कहो अब वेग लेउ । जब शुक्र कहो भगवंत येउ ॥

– शुक्र उवाच –

छलिबे निमित्त आयो द्विजात । हरि आप प्रतषि हे सुनहु तात ॥
इनकूं कहा दीजत पैड तीन । सुर असुर नाग नर सब अधीन ॥

– बलिरुवाच –

बलिराज कहो सुनि शुक्र बात । भगवंत मुझि तलीम मोहु हाथ ॥
इनकूं जू पैंड मुर उदिक देहु । विख्यात बात जगमें करेहु ॥
इमि कहत नीर करवो उठाय । संकल्प करत बलिराज ताय ॥
तब शुक्र धारी सूक्षिम शरीर । करवामधि पैठो आप धीर ॥
जलद्वार रुक्यो भगवंत जानि । कुश छिद्र धकायोहु आप पानि ॥
चक्षुमेंहि गडो कुशअग्र जाइ । भगवंत पानि जल पर्‍यो आइ ॥२९॥

– दोहा –

चक्षुहीन या बिधि भयो, सुनि विक्रम नरराज ।
शुक्र स्वामिधर्मी सदा, अपना सेवक काज ॥३०॥
तब शुक्रहिं दंडोत करि, विक्रम भाषी बात ।
वरनो जसो पुरानमें, हूजै सो बिख्यात ॥३१॥
जो या शुक्राचार्यकी, कथा सुनै नर कोइ ।
करजोर्‍या राघव कहै, नित नवमंगल होइ ॥३२॥

– द्वितीय पंडित उवाच – कुंडलिया –

बडपन देखहु सोमको, सर्व इमृतकी धार ।

अन ओषधि पोषत सदा, सब ग्रहमाहि उदार ॥
सब ग्रहमाहिं उदार चंद्रशशियंद कहावत ।
हिमकर द्विजपति अरु मयंक कर शीत बतावत ॥
पंडित उचरत बैन असुर सुर करिदै तप्पन ।
सुनिविक्रम क्षितिपाल सोमको बडो बडप्पन ॥३३॥

– तृतीय पंडित उवाच – दोहा –

पंडित बोल्यो तीसरो, महाचतुर श्रवजान ।
सुन विक्रम तोसों कहूं, मंगलबार विधान ॥३४॥

– छप्पय –

मंगल बडो महंत संत पूजाधर बारिय ।
धरतीपुत्र पवित्र नव ग्रहमें अधिकारिय ॥
लाल बदन आकृति उदार सुसुरासुर ध्यावत ।
किंन्नर चारन सिद्ध और गंधर्व गुन गावत ॥
यह देव बडो विक्रमनृपति,जो नर इनका ध्याइ है ।
कर जोरि राघव इमि कहै, मनवांछित फल पाइहै ॥३५॥

– दोहा – चतुर्थ पंडित उवाच –

चौथो पंडित बोलियो बुद्ध बढो सबमाहिं ।
हन्या बरनको ध्यान धरि, निशिबासर घट मांहिं ॥३६॥

– पांचवा पंडित – दोहा –

बोल्यो पंडित पांचऊ, सुन बिक्रम क्षितिपाल ।
सुरगुरु कहिय बृहस्पतिहि, देवनको प्रतिपाल ॥३७॥

दैत्यनके गुरु शुक्र हैं, देवनके बृहस्पति ।
पीतबरन इनको प्रगट, राघव ध्यावन निति ॥३८॥

– छठो पंडित उवाच – छंद–चौपाई –

पंडित छठो कहत सुन विक्रम । राजनको सुनिबो है नित श्रम ॥
आदितवार कहत दिनकरको । ध्यान करत निसतारो नरको ॥
सब ग्रहपती सूर्य नारायण । इनको भजत होय तारायण ॥
सप्तद्वीपमें ज्योति बिराजत । ऊगत भानु तिमिर सब भाजत ॥
जगमग जोति होत दशहू दिश । जिनको राघव गावत नितजश ॥३९॥

– दोहा –

सूरज शंकर विष्णुमें, भेद करै नर नर कोइ ।
सो है पापी जानिये, कदे न गति तिहि होइ ॥४०॥

– सातूं पंडित – चौपाई –

सातूं पंडित बोल्यो बानी । राहु केतु उत्पत्ति बखानी ॥
बिक्रम सुनो राहुकी करनी । सब पुरानमें ऋषियन बरनी ॥
राहु नामक यक दैत्य कहावत । छलकी बात बहुत उपजावत ॥
ताके शीश चक्र छिटकायो । ताते राहु रु केतु कहायो ॥४१॥

– राजोवाच – दोहा –

तब बोल्यो नृप विक्रम, पंडित झूठि बात ।
दोइ भये इक देहते, येंही बात निधात ॥४२॥
क्यो मार्‍यो हरि राहुको, कियो कहा अपराध ।
इनकी कथा बखानहू, पंडित बुद्धि अगाध ॥४३॥

– पंडित उवाच – छंद पद्धरी –

यकसमय देवदैत्यन मिलाय ।दधि मथन काज करि लियउ आय ॥
यह अंगदराज कटन उपाय । सब दैव मिले दैत्यन बुलाय ॥
मंदराचल परबत रई काज । लाये उठाय दो मिलि समाज ॥
नेताकजि वासुकि नाग ल्याय । लपटाय दियो अपने सुभाय ॥
जलमांहि गयो परबत बिलाय ।सुर कहत गयो निरफल उपाय ॥
अब त्राहि त्राहि करुणानिधान । ऊपर अब कीजे रमाप्रधान ॥
इमि कहत लियो कमठावतार । परबत उठाई ले पीठिधार ॥
परबत सौ योजन दश बिथारि ।सोहि अध ऊरध काटो मुरारि ॥
खैंचन तब लागे दैत्य देव । जानत नहिं दानव इमृत भेव ॥
मदिरा घट निकर्‍यो प्रथम आइ ।सोहि लियो जाइ दैत्यन उठाइ॥
फिरि निकसि हलाहलकलश एक। सुर असुर जरन लागे जितेक ॥
शिव कियो जहर तदिही अहार। बपु जरन लगो विष बधि अपार ॥
भगवंत दियो अगुंलिन बंठ । तबते जु भये हर नीलकंठ ॥
फिरि मथत भये करिकरि विचार। निकर्‍यो जु शीतकर अति सुढार ॥
शिव लियो शीश धरि चंद्र चार। बिषकी जब मिटिगी प्रबल पार ॥
इहिभाँति रतन चौदा निकार। बाँटे जु विष्णु करि करि बिचार ॥
इमृत घट मेले बीचमाहि । पंगति करि बैठे ठाहिं ठाहिं ॥
धरि रूप मोहिनी आप आय । मदिरा जु अमी पांमें उपाय ॥
तहँ देखि रूप अद्भुत अपार । आसुर सब भूले तन सम्हार ॥

– मोहनी उवाच –

तब कहत मोहनी कपट मोय । तुम लरत हेतको कहो मोय ॥
मेरो मत मानौ असुरदेव । पाऊं जु बराबरि इमृत येव ॥

– बिरोचन उवाच –

तब राज बिरोचन कही बात । यहि समय उचित करिबो न घात ॥
जब कलश लिये दोऊ उठाय । दोउ पंगति सूं बाहरि छिपाय ॥
मदिरा जु पिवावत असुर देखि । सुर पावैं इमृत कपट भेषि ॥
यक राहु नाम आसुर भुवार । सोहि लख्यो मोहिनीको बिचार ॥
धरि देवरूप आयो उदार । शशि सूर बीच बैढ्यौ लबार ॥
निशिनाथ दिवाकर बीच बैठि । ईमृतको प्यालो लियो ऐंठि ॥

– दोहा –

बैठो राहू दोउ बिच, शंका मानत नाहिं ।
सैनकरी दिनकर शशी, येह दैत्य सुरमाहिं ॥४४॥
चक्र सुदर्शनकी दई, पऱ्यो शीश धरि आय ।
मऱ्यो न अमी प्रभावतैं, सुनु हो विक्रम राय ॥४५॥
धरको राहु रह्यो तबै, शिरको रहो जु केत ।
जदिको बैर चितारकै, चन्द्र सूर्य दुख देत ॥४६॥
आदि अंतसौं मैं कही; राहु केतुकी बात ।
नृप विक्रम सुनि लीजिये, है पुराण विख्यात ॥४७॥
येह कथा स्वर्भानुकी बैठि विचारै कोय ।
करि बन्दन राघव कहै, नित नव मंगल होय ॥४८॥
प्रात ऊठि इसको पढै, राहु कहै नर कोय ॥४९॥

- आठूं पंडित - दोहा -

पंडित बोल्यो आठऊं, सुन नृप विक्रम बात ।
कहूं शनैश्चरकी कथा, जो जगमें विख्यात ॥५०॥

- चौपाई -

गनपति सुरसतिकूं शिर नाऊं । मन्ददेवकी कथा सुनाऊं ॥
नौग्रहमें है बडो शनीसुर । इनसूं सब डरपैं सुर आसुर ॥
छाया मात दिवाकर पीता । जिनकी बरत जगतमें सत्ता ॥
नौऊ ग्रहमें है जोरावर । कर बीमार लगै जिह प्यावर ॥
श्याम बरन तन कये श्यामघन। वाहनश्याम कहत सबही जन ॥
लोह लून तिलदान सुहावत । तेल कसार महिष वित चाहत ॥
जिन पर रूसत देव शनैश्चर । भिक्षा मांगत फिरै जु घरघर ॥
जिनपर तुष्टमानवै स्वामी । अनधन बहुत देत नभगामी ॥

- सोरठा -

तब पंडित यह रूप कह्यो शनैश्चर देवको ।
भै चकि विक्रम भूप, कहत भयो द्विजराजसूं ॥५१॥

- राजोवाच - छन्द भुजंगप्रयात -

अहो देवतै रूप ऐसो बतायो । सुन्यो नाहिं देख्यो कहीं भी न गायो ॥
महाकूर रूपं महाकूर बसनं । महाकूर दानं महाकूर असनं ॥
महाकूर आभूषणं कृष्णवरनं । महाकृष्ण कीशं ईसो छत्र धरनं ॥
ग्रह आठ अच्छे महाशांति रूपं । इसो नाही शनिदेव महाकूरूपं॥
अही द्विजराज तुमें बात हेरो । महारूप बिकराल शनिदेवकेरो ॥
तबै बोलि पंडित कही बात पाछी । शनिदेवकी राज निंदा न आछी ॥

अही राज विक्रम शनीसन्निधानं। यही बात आछी नही है निदानं ॥
करे देव कोपं हरै राज सारो। चलावै विदेशं अकाजं तिहारो ॥५२॥

- दोहा -

पंडित ईम कह्या बचन, विक्रम भाया नाहिं।
निंद्यो शनिचर देवनै, करि गल्यानि मनमाहिं ॥५३॥

- शनैश्वर उवाच - दोहा -

तबहीं नभबानी भई, बोले आप दयाल।
अब में तोकूं देत हूँ, निन्दाफल तत्काल ॥५४॥

- चौपाई -

निन्द्यो मोहिं दोषबिन राजा । अब करिहौ मैं तोर अकाजा ॥
रे चंडाल अधम सुनु पापी । मानत नाहि आपही थापी ॥
मेरो नाहिं सुनो परभाउ । जिसका फल ये है सुनि राउ ॥
मैं नलराजाको दुख दीनौ । काढि नगरसे बाहर कीनौ ॥
भुंज्या तीतर दिया उडाई । पीछे उनकी करी सहाई ॥
बहुरि सुनो रावणकी बात । कुटमसहित मैं कियो निपात ॥
लंक जारिके छार उडाई । निंदाको फल भुगत्यो राई ॥
तू नर होय नरेन्द्र कहायो । राज पाय एतो गरबायो ॥
रे शठ मूरख अधम अज्ञानी । रे बस सप्त भुगतै गोहानी ॥
ऐसे कहि कै सौरी गयो । विक्रमके मन विभ्रम भयो ॥५५॥

- दोहा -

नींद निशा नहिं भूपतिको, बात करत नहिं राज।
छिपो रहत है महलमें, गिन न काज अकाज ॥५६॥

- सवैया -

राजन चेत न देत करै, निशिबासर जीव उडोहि फिरै ।
बरती शनिदेवकी आइ दशा, बिजया भबज्यूं नृप मूनि भरै ॥
कबहूं चुप होय रहै कबु गावत ध्यावत है कबु ध्यान धरै ।
रस जान कहे यह विक्रमकी, गति ऐसी भई नहिं जानि परै ॥१॥
निशि एक उठो भयभीत भयो, निकस्यो जु उजीनको छांडि दई।
तन कीन सभा रच ल्यो जु उजारि, ऐसी गति विक्रमकी जु भई।
तन क्षीन भयो नृप दीन भयो रस जान कहे यह बात भई ।
निशि वासर चेत रहै शनिदेव करूर भयो जस दीन मई॥५७॥

- दोहा -

फिरत फिरत राजा गयो, पुरी चंपावती पास ।
नगर देखि हर्षित भयो, मन अतिभयो हुलास ॥५८॥

- चौपाई -

चंपावती नाम एक पूरी । जिन देख्यां अमरावति दूरी ॥
राजा तहां मनोरथ राम । नीतिनिधान धरमको धाम ॥
श्रीपतिसे सेठ बसैं तहँ एक । जिनके कोठी खुलत अनेक ॥
निति आमानदेत विप्रनको । तिन पूजत नारायण जनको ॥
ऐसा श्रीपति सेठ पुनातम । बैसि धरमको साधत महातम ॥
जिस नगरीमें विक्रम आयो । पुरी देखि मनमें हरषायो ॥
तोरण कलश ध्वजा जितिही जिति ।पंडित कथा कहत तितिही तिति ॥
निति मख ब्रह्मभोज तहँ होई । जिहि नगरीमें दुखी न कोई॥

वै पुरमाहीं विक्रम गयो। उदरपूरनां कितिउ न भयो।।
तब आयो बाजार मझारा। बालक बया नगरका लारा।।
कोई कहत सिद्ध है नामी। कोई कहत बावन्यो स्वामी।।
कोई कहत मुनि धारी राखी। जैसी बुद्धि वैसिही भाखी।।५९।।

– दोहा –

चले जात विक्रम नृपति, देखत हाट बजार।
श्रीपति सेठ बुलायकरि, पूंछा सब समचार ।।६०।।
घरै आपने ले गयो, दीनो महल चढाय।
दोय चारि दिन ह्यां रह्यो, हे परदेशी राय ।।६१।।
विक्रम करि भोजन वहां, बैठो और न कोय।
हंस मड्यो चित्रामको, भयो सजीवनसोय ।।६२।।
खूंटी हार टक्यो हुतो, जिनको मोल अपार।
हंस निगलिगौ चित्रको, आइहो सिरजनहार ।।६३।।

– छन्द भुजंगी –

गई नारितेही समै सेठकेरी । चढी चित्रसारी लिया साथिचेरी ।।
लहो नाहिं हारै सु पाछी सिधाई ।नहीं हार पायो सौ सेठी कहाई।।
लियो हार मेरो बटाउ कंगालं ।गयो नाहिं कोऊ उहां और हालं।।
तबै सेठ पूछ्यो सुनो हो सिपाही ।लियो हार मेरो सुदीजे गिराई।।
क्षुधावान जानौ दुरबल कंगालं। तबै ल्याय डेरो दियो चित्रसालं।।
छिपाया सुहारं करी तै चालाकी। कहा बात आछी रही ना भलाकी ।।
अबै तोहिं भाखूं सूनो सत्य बानी ।सुने राज तेरे करेगी निसानी।।
तबै बोलि राजा दिये ज्वाब ऐसो। लियो नाहिं हारं दिऊँ तोहि कैसो ।।

तबै सेठ करि कोप चेरो हकारे । गहे आइ राज सुवानी बकारे ॥
सही मार केती सु बोले न बानी। कियो कोप शनिदेव निंदा जु गानी।६४।

- दोहा -

त्रास दई पुनि बोलियो, विक्रम बोलत नाहिं।
कोप शनैश्चरदेवको , समझिलियो मनमाहिं ॥६५॥
सेठ जाय दरबारमें, करी पुकार अपार।
तस्कर आयो शहरमें, चोरि लियो मम हार ॥६६॥

छंद पद्धरी ।

तब सेठ गयो दरबारमांहि । गुदराइ बात प्रतिहार मांहिं ॥
प्रतिहार गयो नृपकी हजूर । कर जोरि अरज कीन्हर जरूर ॥
दोढीपर ठाढो सेठ आज । मिलिबो जु चाह राजाधिराज ॥
तब कही नृपति तुम आन देहु । बरजो न सेठ श्रीपति जु येहु ॥
पकऱ्यो जु हाथ दरबार आन । चलिये जु बुलावत सेठ राय ॥
जब जाय सेठ कीन्हों जुहार । नृप कह्यो आइये साहुकार ॥
कर जोरि सेठ तब अरज कीन । यक चोर हमारो हार लीन ॥
हम त्रास दई नटिगो लबार । इसको जु आप कीजे विचार ॥

- राजोवाच -

नृप बूंझत बहु सुनि सेठ राय । किहि भांति हार लीनो चुराय ॥

- सेठ उवाच -

तब सेठ कह्यो सुनिये नृपाल । मैं गयो हाटि अपनी भुवाल ॥
यक फिरत फिरत आयो कंगाल । देख्यो जु दरिद्री बेहवाल ॥

तिस भूख देखी मैं दया कीन । पठयो जु घरा जल अन्न दीन ॥
निशि एक रह्यो मेरे दुवार । तिहि राति चुरायौ चंद्रहार ॥
तब राज बुलायो कोटवार । पकरो जु बेगि लावोअबार ॥
इमि कहत चल्यो तब कोटवार। ल्यायो जु पकरि विक्रम भुवार।६७।

– राजा मणिराम उवाच – सोरठा –

नृपति मनोरथ राम, तस्करको पूछत भयो।
पैठि सेठके धाम, हार लियो सो दीजिये ॥६८॥

– विक्रमादित्य उवाच – सोरठा –

तबहीं बोलत चोर, हार लियो नाहीं नृपति।
चलै न मेरो जोर, न्याय करीजै छत्रपति ॥६९॥

– दोहा –

नृपति मनोरथराम तब, बैठि विचारत न्याव।
परी दृष्टि शनिदेवकी, अंतर धऱ्यो कुभाव ॥७०॥

– छन्द अर्द्धनाराच –

बुलाय कोठवारने । कँगाल चोरमारने ॥
कही जु बात राजही । सुऔर नांहिं लाजही ॥
कटो जु हात नीचयं । न खोजु राह बीचयं ॥
कटो जु पांव चोरके । जु प्राण जायँ ओरके ॥
सुना जु बातयूं कही । उठाइ ले चल सही ॥
गये जु नग्र बारही । जहांसु चोर मारही ॥
कटे जु पाँव हाथयं । न कोय और साथयं ॥
पऱ्यो जु राव एकही । लिख्यो जु ब्रह्मलेखही ॥

तहां जु यो शनीसुरं । जगतको जोइ ईसुरं ॥
कही जो रायको कथा । निंद्यो जु मो चितै वृथा ॥
प्रभाव मोहिं तां लख्यो । नृपाल तैं वृथा जख्यो ॥
डरंत मोहिं मानयं । सुथान छाडि भाजयं ॥
डरंत मोहिं जंखियं । डरंत मोहिं पंखियं ॥
डरंत मोहिं देवता। सिद्ध गंधर्व सेवता ॥
डरंत दीप सातयं । धरंत ध्यान प्रातयं ॥
डरंत देव दानवा । डरंत मोहिं मानवा ॥
त्रैलोक माहिं मान है । नृपाल मोहिं जानि है ॥७१॥

– दोहा –

तैं निंद्यो नृप विक्रमा, और न निंदै कोय।
तिहिको फल मैं तुझि दियो, भुगतो राजन सोय ॥७२॥
यों कहिके शनिदेवता, अपने लोक सिधाय।
राजा पन्यो उद्यानमें, हाय हाय रटलाय ॥७३॥
फिरत फिरत यक नगरको, तेली गयो जु पास।
चौरंग्याने देखिकै, मन अति भयो उदास ॥७४॥

– चौपाई –

तब तेलीको उपजी दया । कोटवारको पूँछन गया ॥
कोटवार नृपसूं गुदराई । मनीरामका मनमें आई ॥
धरि ले जाइ रु जतन करावो । मांगां जबै राजमें ल्यावो ॥
जब तेली अपने घर लायो । चोरंग्याको जतन करायो ॥

घाव बंदको लियो उलाई । इहिविधि तेली जतन कराई ॥
राख्यो ले पडदाके मांही । एक पल ढीलो छांडत नाहीं ॥
हाथ पांव बिन दुर्बल देखी । मनमें बाढी दया बिसेखी ॥
दयावानकी यंही रीती । दुरबलसती पालै प्रीती ॥
वेही भक्त रामके जानो । दूरि भयो ताको अभिमानो ॥७५॥

– छप्पय –

दयावन्त तिलपेल बसत चंपावति पुरमें ।
दया धारि मनमाहिं ले गयो अपना घरमें ॥
राजन सूं गुदराय पीडि पाटा जु बँधाये ।
जानि अनाथ गरीब जतन तेली करवाये ॥
इहिभाँति रहत उज्जैन्य नृप बरस षष्ठ तब बीतया ।
रस जान विक्रमादित परी शनिदेव प्रसन्न भया ॥७६॥

– दोहा –

पीर मिटी सब अंगकी, बाहिर बैठत आय ।
बालक ज्यो चालत भयो, फिर सूभाय सूभाय ॥७७॥

– विक्रमादित्य उवाच – चंद्रायण –

विक्रम भाखै बैन अबै सुनि लीजिये ।
हूं चाकर तू स्वामि हुकम मोहिं दीजिये ॥
घानी उपरी बैठि बैल चुटकारि हूं ।
सुनिहो तेली मित्र लैं न उजारिहूं ॥
निशिदिन काढे तेल बैल फिरवायके ।
परिहा करूं टहलहो तात बैठी घरि जायकै ॥७८॥

तब तेली सुनि बात जीव राजी भयो।
घरकी कूंची सौंपि नचीतो ह्वै गयो ॥
काढै तेल अपार फिरावै बैलही।
बेचै ल्यावे आप नग्रमें सहलही ॥
लेख्यो देत सुनाय तेलको प्रातही।
परिहा कर बंदगी कोय बा दिन जातही ॥७९॥

– दोहा –

बरस सात तब बीतियां, चंपावति पुरमाहिं।
तेलीघर विक्रम नृपति, लेखलिख्या न मिटाहिं ॥८०॥

– चौपाई – चातुर्मास्यवर्णन –

पेलि पेलि तिलतेल जु काढत । उपका दिवस विक्रमा बाढत ॥
ग्रीषम बीती लगी जु वरषा । भेक जु चातक बरही हरषा ॥
कज्जल बरन घटा चलि आवत । बिरहिनि नारि देखि सकु चावत ॥
चपला चमक छिपत घन माहिं । ज्यों छिपि विरहिनि निकसत नाही॥
बोलत मोर पपैया बोलत । बिरहिनि जिनके खर उट छोलत ।
दशहु दिशा बादर नभ भरियत । निशिवासरको ठीक न परियत ॥
गाजि गाजि बरसत पृथ्वीपरि । ताल तलाव एक छिनमें भरि ॥
डाबर उझलि नदी मिलि आवत ।
दशहु दिशा जल इत उत धावत ॥८१॥

– बरवा –

उझकि उझकि उठि उठि है, बिरहिनि बरात ।
पीवबिन बसत एकलियां, निशि नींद न आत ॥८२॥

– बिरहिनि वाक्य – कवित्त –

गाजि गाजि आय घन बरसैं अपार जल,
नालभरे तालभरे खालभरे सबही।
झिल्ली झनकार करैं दादुर अपार बोलि,
विरहिनि चित्त हरै पीव बिना अबही ॥
येहो रस जान मास सावन कराल भयो,
कोइलकी कूक सुनि प्रान जात जबही।
चातक पुकारै टुक दयाहू न धारै मैन,
पंचबान ले कमान मारत है अबही ॥८३॥

– दोहा –

बिरहिनि बिरहिनिसो कही, सुनु सखि मेरी बात।
घटा नहीं ये इंद्रकी, काम चमू सजि आत ॥८४॥

– छंद बेताल –

येह घटा नाहिं सुहावनी चतुरंगनी है फौज ॥
बिरहिनि उपरीं अब तो है सुखमांहि मनोज ॥
सुनि कृष्ण बादरना सखी गजराज अप्रबल देखि ॥
यहै लाल बादर नाहिंरी सिंदूरसी सब सेखि ॥
झिल्ली जु दादुर नाहिं बोलत बात मेरी मानि ॥
यह शब्द होत सुहावनू गजकंठ किंकनि जानि ॥
घन गरज नाहीं री सखी बाजत दुंदुभी ढोल ॥
बरही न बोलत कामनी यह गुनीजनके बोल ॥

चपला न चमकत घन मही ये कुंत चमकत देखि ॥
सुगपंति नाहिं बिलोकिये गजदंत उज्ज्वल पेखि ॥
इहि भांति भादौं मासकी निशि तेल काढत आप ॥
अनंद मन विक्रम कियो मल्लारमेघ अलाप ॥
फिरि रागनी सोरठ अलापी गौड बरवै गाय ॥
खंमाच औ सोहनी नीकी तान लेत सुभाय ॥
बेटी मनोरथरामकी मन भावती तिह नाम ॥
सुनि राज विक्रमराजको मनमांहि उमग अराम ॥
तदि पूंछियो चेरीनसूं यह गावतो है कौन ॥
इनको जु चेरी ठीक करि तुम ल्याव अपने भौन ॥
तब कह्यो दासी अरज मेरि सुनौ राज कुवांरि ॥
नृप काटि पद कर किये चोरंग बस्ततेली द्वारि ॥
वोही जु गावत अरधनिशिमें मधुर बानी माहिं ॥
है चतुर कोई देशको जिनको जु बेरो नाहिं ॥
है तीन ग्राम इकीस मुरछन ताल द्वादश मानि ॥
षटराग तीसों रागिनी सुरसप्त विक्रम जानि ॥
तदि कुँवरि बोली सुनु सखीरी गुप्त बात पहछानि ॥
तुम पाँगुलाको ल्याव अपने हुकुम मेरो मानि ॥
तब गई चेरी जहां विक्रम तेलिका घरमांहि ॥
तोकूं बुलावत कुँवरि मेरी अब नठिये नांहिं ॥
ल्याई जु चेरी गोदिमें देखी न काहू वोर ॥

ले चढी परछत महलमें मन भावती जिहि ठोर ॥

– दोहा –

रहत विक्रम महलमें, मनभावती हजूर ।
राग करत आठों पहर, भवन रह्यो भरपूर ॥८५॥

– चौपाई –

रहत महलमें नरियद छानै । ताकी बात कोइ नहिं जानै ॥
गावत राग कुँवरिके आगे । ताकूं देखत गंधर्व भागै ॥
साढेसात बरस तब बीता । राजा बिक्रम भये निचीता ॥
सारी दशा उतरी शनिकी । चिंता मिटी नृपतिके मनकी ॥
इक दिन सूतो महल मँझारी । ध्यान शनैश्चरको उर धारी ॥
तुमही तम रज सत त्रय मूरति । पालत सृजत करत लय सूरति ॥
गती मुकतिके तुमहीं दाता । तुमही तीन लोकके त्राता ॥
अब सुनु देव पुकार हमारी । दृष्टि करूर सही मैं भारी ॥
राजा ध्यान करत शनिकेरो । मैं हूं जन्मजन्मको चेरो ॥
निंदा करी जु मैं भरि पाई । अब करिये जो आप बडाई ॥
ऐसे कहत नयन भरि आये । गदगद बानी कंठ सुहाये ॥
मूर्छा आई विक्रम पर्‍यो । ह्यैलकूणमें तब जा गिर्‍यो ॥
एक याम पीछे भयो चेत । आये कर पद लखन समेत ॥
देखत भूपति राजी भयो । मनको सोच सबै मिटि गयो ॥
मार्तंडसुतकूं सिर नायो । मन क्रम बचन नृपति जस गायो ॥
प्रगट भये तब देव शनिश्चर । राजा करत अस्तुति जोरि कर ।८६।

– छन्द अर्धनाराच –

नमो नमो शनिश्चरं । जगतके जु ईश्वरं ॥
नमो जु कृष्ण रूपयं । भजंत तोहि भूपयं ॥
नमो करालदृष्टियं । भजंत पाप हट्टियं ॥
नमो असित ग्रीवयं । जगतके जु पीवयं ॥
नमो बिशाल नैनयं । पुरस गात्र चह नयं ॥
नमो जु सबी भखियं । नमो बिसाल अवियं ॥
नमो नमो करालने । नमो महिषवाहने ॥
नमो नमो जु अंतकाय । नित्यही क्षुधारताय ॥
कृतांत रूपते नमं । कालाग्नि रूप ते नमं ॥
शिलीमुखं नमोस्तुते । शुष्कोदरं दुखोह ते ॥
नमो जु सूर्य बालयं । नमो नमो करालयं ॥
नमो जु गतीमन्दयं । जु रुद्ररूप मंदयं ॥
ध्याया जु पुत्र ध्याइये । समीप मुक्ति पाइये ॥
वक्त्राय नीलये नमो । करंत ध्यान विक्रमं ॥
अनंत कायये नमं । पुजंत तोहि कुंजमं ॥
करंत राज ध्यानही । बोल्यो जु पुत्र भानही॥८७॥

– शनिरुवाच – दोहा –

मैं तुष्टा विक्रम नृपति, तू बर मांगि भुवाल।
बरस सप्त भुगताइया, अब तुझि करूं निहाल ॥

छंद पद्धरी -

बरमांगि मांगि राजाधिराज । अब सरब सुधारूं तोहिं काज ॥
वर मांगि मांगि विक्रम भुवाल । तैं बहुत कष्ट पायो नृपाल ॥
वर मांगि महीपति बेगि मोहिं । त्रैलोक्यराज मैं देउँ तोहिं ॥
बर मांगि मांगि नरलोक इंद । मनबंछित फल देऊं नरिंद ॥
वर मांगि मांगि जिन बार लाय । मैं प्रसन्न भयो उज्जैनिराय ॥
वर मांगि नराधिप कहूं तोहिं । मम वचन नृपति मिथ्या न होहिं ॥

- राजोवाच -

तब पानि जोरि बोले नृपाल । यक अरज हमारि सुन दयाल ॥
देवाधिदेव प्रभु धर्मधाम । सब कहत दीनके बंधु नाम ॥
अब भयो आप मोपरि दयाल । बर देओ नाथ मोय जानि बाल ॥
ऐसो जु कष्ट मोहिं दियो आप । भुगत्यो जु देवमैं करि कलाप ॥
जोजीव बसत संसारमांहि । तिनको दुख दीजे नाथ नांहि ॥
नरनारिपशू पंखी जु कोय । अहि गंधर्व चारन सिद्ध सोय ॥
कर जोरि कहत ऊज्जीनराय । जड चेतनकी करिये सहाय ॥

- शनिश्चर उवाच - दोहा -

कहत सुनत मेरी कथा, मन क्रम पूजत मोहिं ।
रुद्रराशिको देहु फल, सत्य कहत हूं तोहिं ॥८८॥

- चौपाई -

मेरी कथासुनत नरनारी । सोही हैं मेरो अधिकारी ॥
ताको राशि ग्यारवेंको फल । देऊं रक्षा करूं जु पलपल ॥

सुनत बचन बिक्रम मन भाये । ऐसे शनिदेव सिधाये ॥
यो सतोत्र त्रयकाल पढे निति । ताकी बढत जगतमें परमिति ॥
पाप देहकृत दूरि पलावत । हर्षित ह्वैकै शनिको गावत ॥
प्रातकाल अथवा मध्यान । सायंकाल जु पाठहि ठान ॥
ताकी रक्षा करत शनिश्चर । कहत कबीर सुजानि जोरि कर ॥

- छप्पय -

विक्रम शनि संवाद प्रात उठि जो नर गावत ।
अर्थ धर्म अरु काम मोक्ष बांछित फल पावत ॥
प्रसन्न होत ग्रहराज काज सब सुधरत जिनके ।
नारि पुरुष अथवा नर पुंस दुख टारत सबके ॥
सोहि करत ध्यान रस जान कबि तिनके सब कारि जस रत ॥
अनधन अटूट तेहि पुरुषके जगत मांहि जस विस्तरत ॥८९॥

-दोहा -

भयो प्रात जागी कुँवारि, कुरकट बोल सुनाय।
दिनकरकी फैली किरनि, उडुगन गये बिलाय ॥९०॥

-चौपाई-

घरी दोयको तरको रह्यो । राजकुँवरि चेरीसूं कह्यो ॥
अब चौरंग्योको ले आवो । भैरू ललित बिभास गवावो ॥
नर इंद पास गई जब चेरी । कर पद देखि भई तब नेरी ॥
ऊगो जानि महलमें दिनकर । भई प्रगट जिमि छबिकी आकर॥
जानि पुरुष अवतारी कोई । चेरी मनमें हर्षित होई ॥

आय कुँवारिसूँ बात उचारी । अचरज मैं देखो इक भारी ॥
चौरंग्याको कर पद आये । सब बृत्तांत तब आय सुनाये ॥९१॥

-दोहा -

सुनत बात मनभावती, आई नृपके पास।
कमल दृष्टि कर पद निरखि, मन अति भयो हुलास ॥

--मनभावती उवाच - कवित्त -

योही बर मेरो कोई बातको न झेरो
हेरो कोई कहो आछी और कोई करो चारीरी ॥
हार सजान हम बात या बिचारि मारी
जारी बेजारी कोई भाखो नरनारीरी ॥
मात खीजो तात खीजो भाव पिरवार लाजो
लिखी विधाता सो तो टरे नाहिं टारीरी ॥
जानि अवतारी भारी मनमें बिचारी प्यारी
योहीं बर मुरारी मोको देऊं गिरिधारीरी॥९२॥

-दोहा -

रह्यो प्रगट नृप महलमें, भयो प्रसन मलराज।
सह्यो कष्ट शनिदेवको, थयो जु सुखको साज॥९३॥

--मनभावती उवाच- छंद पद्धरी -

अब रहत महलमें प्रगटराज । शनिदेव सुधारे सबहि काज ॥
यक दिवस कुँवरि सूं मिलन चाय । आई जु बंधु घरनी चलाय॥
देख्यो जु पुरुष आगारमांहि । भये रक्त नैन बोली जु नाँहि ॥

– मनभावती उवाच – छंद पद्धरी –

तब कहत कुँवारि यह पुरुष है न । यह प्रतख देह धारी जु मैन ॥
यह देखि चरित फिरि नारि जात । आईजु सासकै निकटि प्रात ॥
कर जोरि सास सौं अरज कीन । कुँवरि कर्म करि है मलीन ॥
राख्यो जु पुरुष पुत्री छिपाय । इनकी जु सास करिये उपाय ॥
यह सुनत बात करि रक्त नैन । रानी मन उपज्यो अति हि चैन ॥
मनिराम राज लीनो बुलाय । सबही वृत्तांत नृपको सुनाय ॥
दंपति मिलि आये कुँवरि पास । जब देखि कुँवरि मन बढिय त्रास ॥

– मनीराम उवाच –

बोल्यो जु बैन तब मनियरराय । पुत्री तैं करियो नष्ट काम ॥
यह राजसुताकी रीति नांहि । लागै कलंक सब कुटुंब मांहि ॥

– मनभावती उवाच – दोहा –

बोलि कुँवर मनभावती, कह नुपतिसूं बात ।
पुरुष नहीं यो देव है, तुमहिं बिचारहु तात ॥९४॥

– छंद त्रोटक –

तब कुँवरि ऊतर इमि दियो । विन न्याव कियो नुकसान कियो ॥
कर पाव कटे जिनके तुमही । तिनको जब लाय लियो हमही ॥
जिनके कर पाव सु काटि लिये । प्रभु जानि गरीबहि फेरि दिये ॥
सुनिये अब तात कहूं तुमको । पति भेजि दियो विधना हमको ॥
नररूप धर्‍यो सुर है जो पिता । करिये जु अबै मनमें समता ॥
अवतार धर्‍यो मृतलोक मही । नरदेह धरी नर है जु नहीं ॥

इनको तुम बूझि विवाद करो । मनमाहिं पिता तुम धीर धरो ॥
वरमाल घली इनके गलमें । अरु भाखि दियो मुखते बर मैं ॥
यह बात सुनि मनिराम जबै । कर पाकरि ल्यावत भो जु तबै ॥

-दोहा -

पकरि हाथ ल्यावो नृपति, जहां जुरत दरबार।
देखे कर पद चोरके, अचरज भयो अपार ॥

-राजा मनीराम उवाच -

जिनके कर पद काटिकै दियो राह बिच डारि।
तेली ल्यायो अरज करि, लीज्यो सबै निहारि॥९६॥
इनकै बरमाला कुँवरि, घालि दई गरमाहिं।
यह अवतार पुरुष है, देवयोनि नर नाहिं॥९७॥

- छंद पद्धरी -

नृप मनीराम मंत्री बुलाय । मिलि मंत्र कियो तहां बैठिराय ॥
मंत्री जु धुरंधर अति प्रवीन। जिनके जु सुरसती रह अधीन॥९८॥
षटमास अगाऊ कहत बात। सोहि होत टरत नाहीं विख्यात॥
विद्या जु अष्टषटमें प्रवीन । है न्यायशास्त्रमें अतिहि लीन॥
उन कह्यो नृपतिसूँ जोरि हाथ। यह बात उचित करिये जु नाथ॥
यह पुरुष नहीं सुर है नृपाल । इनकूं जु कुँवरि दीजैं भुवाल॥
तब सुनत बात पंडित बुलाय। दीनीजु जन्मपत्री बचाय॥

- पंडित उवाच -

द्विज कहत सुनो राजाधिराज । साहो जु कढो हम श्रेष्ठ आज॥

अगहन बदि अष्टमि कृष्ण पषी । शनिवारे श्रेष्ठ साहो प्रीतषी ।।
पुनि लग्न धर्‍यो हम गोधलूक ।अब कहत कौन तिलमात्र चूक ।।९९।।

- कुँडलिया -

सब पंडित कीन्हे बिदा, दीन्है माल अपार।
घरके प्रोहितसूं कही, अब जिन करहु अबार ।।
अब जिन करहु अबार थाम तोरन धरवावौ।
अंतहपुर करि खबरि कुँवरिकै तेल चढावो ।।
मुखमलथान जुराय बेगि तुम मंडिय मंडित।
बिदा कीन मनिरास धरादि सिस बही पंडित ।।१००।।

- बरवा -

हरे बाँस मँगवाये, मंडप छाइ।
नृप विक्रम मनभावति, बैठे आई।।१०१।।
उन बिरियांको ओपमा, बरनि न जाय।
जनके कवि सबही करि, थके उपाय।।१०२।।
बेदऋचा पंडित सखि,मंगल चार।
भाट जपै बिरुदावलि साख उचार।।१०३।।
उमारूप मनभावती विक्रम शिवरूप।
कौरि जु गांरा जसि करो, मनभावती भूप।।१०४।।
सबका नेग चुकाइया, विक्रम खितपाल।
अंदरि आप पधारिया, दे लाखोंका माल।।१०५।।

– चंद्रायणा –

विक्रमादित नरपाल नारि मनभावती।
दंपति करत किलोलि हरष उपजावती ॥
बीति गये षट्मास रैनि दिन रंगमें।
परिहा आदि न करी उजीनि नारिके संगमें॥१०६॥

– दोहा –

एक दिवस विक्रम नृपति, मनीराम ढिग आय।
अरज करि कर जोरिकै , बिदा होनकी चाय॥१०७॥
जुगल नृपति बैठे जहां, आयो श्रीपति सोय।
मेरे गृह भोजन करो, निज्जे जानूं दोय॥१०८॥

– सेठ उवाच – बरवा –

सेठ आय बिनती करी, जुजोरे पानि॥
मेरो गृह पावन करो, मोहिं चेरो जानि॥१०९॥

– दोहा –

सेठ अरज मनिराम सुनि, मन अति भयो हुस्यार।
मम नगरीमें चाहिजे, ऐसो साहूकार॥११०॥

– चौपाई –

मनीराम जुग फील मगाये । ह्वै असवार सेठ घरि आये ॥
शिबिका सदन पयादेही पिलि । जानक भादव मास घटा चलि॥
अश्व दूर बाजारन भावत । सुरपति चमू जोरि नहिं आवत ॥
बाजिव बील ढोल आरव बजि । मानउ भादव मास घटा गजि॥
गावत गोष गोष खडि कामनी । तिनको देखि लजित ह्वै दामनी ॥

हस्तिनि शंखिनि चित्रिणि पद्मिनि। गोष गोष ठाढी त्रिय बनि ठनि।
छाय बजार बनिक उच्छव करि। हेमपुष्प बरषत राजन परि।१११।

- दोहा -

मनीराम विक्रम नृपति, पहुँचे सेठ दुवार।
श्रीपति निजरि करी वहां, हीरे लाल अपार ॥११२॥
जहां हंस चित्रामको, मड्यो महलके माहिं।
जुगल नृपति अरु शेठ तहँ बैठे और जु नाहिं॥११३॥
उगलन लाग्यो हंस तब सेठ हार सख्यात।
श्रीपति अरु मनिरामको भई अपूरब बात॥११४॥

- मनिराम उवाच - छंद पद्धरी -

को नगर तिहारो नाम काय । अवतार धन्यो किहि बंस माय ॥
नर हो कि देव आसुर उदार । मुनिराज देहधारी सुढार ॥
अवतार धरी मृतलोक माहिं । आये जु आप संदेह नाहिं ॥
हम चोर जानि नुकसान कीन । जिनके जु दंड मैं पुत्रि दीन ॥
अब जाति नाम कीजै प्रकास । मनिहोत हमारे अति हुलास ॥

- विक्रमादित्य उवाच -

दिख दान दिशा शिवपुर कहंत । उज्जैनिपुरी तहां हम रहंत ॥
मोहिं जानि सदाशिवको गुलाम ।जग कहत विक्रमादित्य नाम ॥
पुनि कहूं तोहिं सुनि हो नृपाल। यह कियो शनिश्चर मम हवाल ॥
यह सुनत बात मनिराम राज। धनि धन्य कहत मम सरेहु काज॥
धनि धन्य भाग्य मेरो नृपाल । धनि धन्य पधारे तुम दयाल ॥

इमि कहत लिये पदकमल जाय। गद्गद सुकंठ जल नेत्र जाय ॥
मोहिं दास जानि ऊजैनराय । प्रेमातुर भो नृप मनियराय ॥

– विक्रमादित्य उवाच –

तब बोल विक्रमादित नरिंद । जिनि डरहु शूर नरलोक इंद ॥
तुम कौन दोष शनि कोप कीन। मोहिं सप्त बरष भुगताय दीन।११५।

– मनिराम उवाच –

मनिराम जोरे सु कर, मन उपज्यो अहलाद।
कोप शनिश्चर क्यूं कियो मोहीं कहो दामाद॥११६॥

– विक्रमादित्य उवाच – छंद भुजंगी –

तबै बोलि विक्रम कही बात सारी। कियो कोप शनिदेव मोपैं दकारी॥
सभा जोरि बैठे हमैं एकबारं। चली बात अनेक चरचा उदारं ॥
मिल्यो जोतसी औ कबी औ पुरानी। कही आय आपं कथा प्रेमसानी॥
जबै मैं कही है नउग्रह देवा। अहो दूजराजं कहो मोहिं भेवा ॥
किसो ग्रह आछ्यो किसो है करूरं। किसो ग्रह काजं करतं जरूरं॥
तबै दूजराजं कही मोहिं सारी। नऊ ग्रह आछे सदा क्षेमकारी ॥
जबै मैं कही रूप प्राक्रम बखानूं। किसो ग्रह आछो किसो हैं भयानूं।१७।

– दोहा –

तब पंडित नव ग्रहनको, रूप सुनायो मोहिं।
पंडित मुखसे मैं सुन्यो, सो अब भाखत तोहिं॥११८॥

– चौपाई –

बरन शुक्रको शुक्ल बतायो। सुनत जीव मेरो हरषायो ॥

चक्षुहीन उनको करी बावन । बलिराजको कियो जु पावन ॥
सोमदेवको बरन बतायो । ताको सुजस भागवत गायो ॥११९॥
रक्त बरन मंगलको आख्यो । धरतीपुत्र बेदमें भाख्यो ॥२॥
हऱ्यो बरन बुधको मोहिं कयो । पीतबरन बिसपतको लयो ॥५॥
सब ग्रहपती दिवाकर मंडित । सप्तदीपमें जोति अखंडित ॥
राहुकेतु रँग धूम्र बताये । एक देहतैं द्वै प्रगटाये ॥१८॥
शनिको रूप कह्यो मोहिं द्विजवर। छाती लागी रतमैं धरधर ॥
ऐसो रूप सुन्यूं जु भयंकर । जब मैं दियो द्विजनको उत्तर ॥
सुनिये पंडित अरज हमारिय । शनिको रूप भयंकर भारिय ॥
सुनत रूप मनि ऊपजि ग्लानिय। देव नहीं जू किंकर जानिय॥
तब करि कोप शनिश्चर आये । गगन बानि यह बात सुनाये ॥

– शनैश्चर उवाच –

निंद्यो मोहिं दोषबिन राजन । भुक्तो फल जिनके दुखभाजन॥
ऐसें बचन कहे जु शनिश्चर । गये अपने लोक जगतगुरु ॥१२०॥

– दोहा –

ता दिनतै विभ्रम भयो, रह्यो नाहिं चित ठीक ।
कह्यो नहीं काहूनसूं, लाज न रही रतीक॥१२१॥
फिरत फिरत तब नगरमैं,आयो सुधि नहिं मोहिं।
बैठो जाय बजारमैं, सत्य कहत हूं तोहिं॥१२२॥

– चंद्रायणा –

सेठ अनाथ गरीब जानि घरि ले गयो ।
भोजन करि रह्यो सोय महलमें कै गयो ॥

किये शनिश्चर कोप चरित अद्भुत भयो ।
परीहा हंसिन गलिगो हार दोष हमको दियो ॥१२३॥

– दोहा –

हंस चित्रको निगलिगो, सब मोतियनको हार।
कोप शनिश्चर देवको, कीनूं चरित अपार ॥१२४॥
चोर जानि मोहिं सेठ तब, तुम दिसि करी पुकार।
दियो कष्ट सो शनि दियो, तुम मति डरो भुवार॥१२५॥
तुम पूंछी नृप मैं कही, आदि अंतसूं बात।
अब मोको दीजे रजा, कीजे बिदा प्रभात॥१२६॥
मिझमानी नृप सेठकी, जीमी प्रीति लगाय।
सेठ विक्रमादित्यने, दई पुत्रिका ब्याह॥१२७॥
हय हाथी रथपालखी, दासीदास अपार।
सेठ विक्रमादित्यने, बिदा कियो शुभ बार॥१२८॥

– चौपाई –

चंपावती पुरीतै बाहरि । अरध कोस उपरी डेरा करि ॥
नरिइंद चारन भाट चुकावत । बिरद बखानि नृपति जस गावत॥
समये अश्व द्विरद कबि लागनि । जयजयकार करत सबही जनि॥
मणीराम आयो वह बेरा । ह्वै असवार नृपतिका डेरा ॥
बैठे नृपति सोभियत ऐसे । ऊगे जुगल दिवाकर जैसे ॥१२९॥

–दोहा –

मनीराम कर जोरिकै, बहुरि बीनती कीन।
दासि भाव साधन हमै, नृपति पुत्रिका दीन ॥१३०॥

बहुरि करी नृप नम्रता, हाथ जोरि परिपाय।
मोको किंकर जानिये, पूरि ऊजिके राय ॥
ऐसे कहि कीन्हे बिदा, दीनह द्रव्य अपार।
स्यंदन शिबिका द्विरद असि, लाखूं लसकर लार ॥
दासीदास गऊ वृषभ, अनगिन दिये हकाय।
बिदा करी मनभावती, पुत्री कंठ लगाय ॥१३१॥

–छप्पय –

चढत विक्रमादित्य ढोल । दुंदुभि डफ बाजत ॥
घोष मिलत निरघोष । मनहु भादव नभ गाजत ॥
बढत रेनु दिनकर प्रजंत । दिनकर कर डक्किय ॥
परि संजोग बिजोग रानि लखियत चकचक्किय ॥
इहिभांति प्रबल दल पेखियत, गिरि कंदर अरियन गहंत ॥
रज जानि विक्रमादित्यको, शिवपुर दिस लशकर बहत ॥१३२॥

–छंद बेताल –

इहिभाति विक्रमको दल बहत सिवपुर पथ।
उठि गरद आछादित कियो नभ ढकित दिनकर रथ ॥
लषि चकचकि संभ्रम भयो दिवसरैनि न ठीक।
उठि गरद क्षितिपति मूर छायउ लखत नाहि मृतजीक ॥
दरकूंच डेरा करत क्षितिपति आइयो जु ऊजीन।
जब पुत्र ऊदित सूनि करि उछवपुरमदि लीन ॥
बाजि भेरि नोबति शंख दुंदुभि ढोल अरु सहनाय।

जग करत बंदन जोरि कर बाजार बनि कछवाय ॥
घरि घरि उछाह अपार करि घरांत बीटि अपार।
घरि घरि जु बरजत दुंदुभी घरि घरि सुमंगलचार ॥
ऊजीनि पुरीके सब जननको देत दर्शन राज ।
अपने सिंहासन जायकै थिरि बैठिया महाराज ॥१३३॥

– दोहा –

इहि प्रकार विक्रम नृपति, भुगत्यो कष्ट अपार॥
मेहर करी शनिदेव तब, राज कियो संसार॥१३४॥
शनि प्रसंग या ग्रंथको, नाव धरो रस जान।
चित लगाय सीखै सुनै, बढे जगतमें मान ॥
जो बांचै सीखै सुनै, चित लगाय यह बात।
ताके लक्ष्मी थिर रहै, इत उत कबहुँ न जात ॥
पुत्रस अपुत्र जो पढै, तिहूँ कालकै मांहि।
बहुत पुत्र ताको हुवै, इनमें संधे नाहिं॥१३५॥
शंकरदास कही मुझे, शुभ की बात सुनाय।
कथा शनिश्चरकी करी, जग बांचत सुख पाय ॥
संवत अठरहसै असी, कियो ग्रंथ विस्तार।
जेठ मासकी द्वादशी, शुक्ल पक्ष शनिवार॥१३६॥
तब मैं जोरे पाणियुग, शिवसुतकूं शिर नवाय।
सरस्वतिको परनाम करि, कृपाराम गुरुध्याय॥१३७॥
करी शनिश्चरकी कथा, मेरी मति अनुसार।
अडबडबानी मैं बक्यौं ज्यौं बकि उठतकुमार॥१३८॥

जनम नाम मम केहरी, दूजो राघव नाव।
सेषावत टकणे तहुंब तीय तरेठा गाँव ॥१३१॥

॥ इति श्रीराघवदास कृत शनिदेवकी कथा संपूर्ण ॥

॥ श्री शनैश्चरार्पणमस्तु ॥

॥ इति शनैश्चर कथा संपूर्ण ॥

॥ अथ श्रीशनैश्चरस्तवराज ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

नारद उवाच ।

ध्यात्वा गणपतिं राजा धर्मराजो युधिष्ठिरः।
धीरः शनैश्चरस्येमं चकार स्तवमुत्तमम् ॥१॥
शिरो मे भास्करः पातु भालं छायासुतोऽवतु।
कोटराक्षो दृशौ पातु शिखिकण्ठनिभः श्रुती ॥२॥
घ्राणं मे भीषणः पातु मुखं वलिमुखोऽवतु।
स्कन्धौ संवर्तकः पातु भुजौ मे भयदोऽवतु ॥३॥
सौरिर्मे हृदयं पातु नाभिं शनैश्चरोऽवतु ।
ग्रहराजः कटिं पातु सर्वतो रविनन्दनः ॥४॥
पादौ मन्दगतिः पातु कृष्णः पात्वखिलं वपुः।
रक्षामेतां पठेन्नित्यं सौरेर्नामबलैर्युताम् ॥५॥
सुखी पुत्री चिरायुश्च स भवेन्नात्र संशयः।
ॐ शौरिः शनैश्चरः कृष्णो नीलोत्पलनिभः शनिः ॥६॥

शुष्कोदरो विशालाक्षो दुर्निरीक्ष्यो विभीषणः।
शितिकण्ठनिभो नीलश्छायाहृदयनन्दनः ॥७॥
कालदृष्टिः कोटराक्षः स्थूलरोमा सलीमुखः।
दीर्घो निर्मांसगात्रस्तु शुष्को घोरो भयानकः ॥८॥
नीलांशुः क्रोधनो रौद्रो दीर्घश्मश्रुर्जटाधरः।
मन्दो मन्दगतिः खञ्जस्तप्तः संवर्तको यमः ॥९॥
ग्रहराजः कराली च सूर्यपुत्रो रविः शशी।
कुजो बुधो गुरुः काव्यो भानुजः सिंहिकासुतः ॥१०॥
केतुर्देवपतिर्बाहुः कृतान्तो नैऋतस्तथा।
कुशी मरुत्कुबेरश्च ईशानः सुर आत्मभूः ॥११॥
विष्णुर्हरो गणपतिः कुमारः काम ईश्वरः।
कर्ता हर्ता पालयिता राज्यहा राज्यदायकः ॥१२॥
छायासुतः श्यामलाङ्गो धनहर्ता धनप्रदः।
क्रूरकर्मविधाता च सर्वकर्मावरोधकः ॥१३॥
तुष्टो रुष्टः कामरूपः कामदो रविनन्दनः।
ग्रहपीडाहरः शान्तो नक्षत्रेशो ग्रहेश्वरः ॥१४॥
स्थिरासनः स्थिरगतिर्महाकायो महाबलः।
महाप्रभो महाकालः कालात्मा कालकालकः ॥१५॥
आदित्यभयदाता च मृत्युरादित्यनन्दनः।
शतभिरुक्षदयिता त्रयोदशीतिथिप्रियः॥१६॥
तिथ्यात्मा तिथिगणनो नक्षत्रगणनायकः।
योगराशिमुहूर्तात्मा कर्ता दिनपतिः प्रभुः ॥१७॥

शमीपुष्पप्रियः श्यामस्त्रैलोक्यभयदायकः।
नीलवासाः क्रियासिन्धुर्नीलाञ्जनचयच्छविः॥१८॥
सर्वरोगहरो देवः सिद्धो देवगणस्तुतः।
अष्टोत्तरशतं नाम्नां सौरेश्छायासुतस्य यः॥१९॥
पठेन्नित्यं तस्य पीडा समस्ता नश्यति ध्रुवम्।
कृत्वा पूजा पठेन्मर्त्यो भक्तिमान्यः स्तवं सदा॥२०॥
विशेषतः शनिदिने पीडा तस्य विनश्यति।
जन्मलग्ने स्थितिर्वापि गोचरे क्रूरराशिगे॥२१॥
दशासु च गते सौरेस्तदा स्तवमिमं पठेत्।
पूजयेद्यः शनिं भक्त्या शमीपुष्पाक्षताम्बरैः॥२२॥
विधाय लोहप्रतिमां नरो दुःखाद्विमुच्यते।
बाधा चान्यग्रहाणां च यः पठेत्तस्य नश्यति॥२३॥
भीतो भयाद्विमुच्येत बद्धो मुच्येत बन्धनात्।
रोगी रोगाद्विमुच्येत नरः स्तवमिमं पठेत्॥२४॥
पुत्रवान्धनवान् श्रीमान्जायते नात्र संशयः॥२५॥

नारद उवाच।

स्तवं निशम्य पार्थस्य प्रत्यक्षोऽभूच्छनैश्चरः।
दत्त्वा राज्ञे वरं कामं शनिश्चान्तर्दधे तदा॥२६॥

इति श्रीभविष्यपुराणे शनैश्चरस्तवराजः समाप्तः।

॥ शनैश्चरस्तोत्रम् ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ अस्य श्रीशनैश्चरस्तोत्रस्य दशरथ ऋषिः । श्रीशनेश्चरो देवता । त्रिष्टुप् छन्दः। शनैश्चरप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥

दशरथ उवाच ॥

कोणोऽन्तको रौद्रयमोऽथ बभ्रुः कृष्णः शनिः पिंगलमन्दसौरिः ।
नित्यं स्मृतो यो हरते च पीडां तस्मै नमः श्रीरविनन्दनाय॥१॥
सुरासुराः किंपुरुषो रगेन्द्रा गन्धर्वविद्याधरपन्नगाश्च।
पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः ० ॥२॥
नरा नरेन्द्राः पशवो मृगेन्द्रा वन्याश्च ये कीटपतङ्गभृङ्गाः ॥
पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः० ॥३॥
देशाश्च दुर्गाणि वनानि यत्र सेनानिवेशाः पुरपत्तनानि।
पीडयन्ति सर्वे विषमस्थितेन तस्मै नमः० ॥४॥
तिलैर्यवैर्माषगुडान्नदानैर्लोहेन नीलाम्बरदानतो वा।
प्रीणाति मन्त्रैर्निजवासरे च तस्मै नमः० ॥५॥
प्रयागकूले यमुनातटे च सरस्वतीपुण्यजले गुहायाम्।
यो योगिनां ध्यानगतोऽपि सूक्ष्मस्तस्मै नमः० ॥६॥
अन्यप्रदेशात्स्वगृहं प्रविष्टस्तदीयवारे स नरः सुखीस्यात्।
गृहाद्गतो यो न पुनः प्रयाति तस्मै नमः० ॥७॥
स्रष्टा स्वयंभूर्भुवनत्रयस्य त्राता हरीशो हर्ता पिनाकी।
एकस्त्रिधा ऋग्यजुःसाममूर्तिस्तस्मै नमः० ॥८॥

शन्यष्टकं यः प्रयतः प्रभाते नित्यं सपुत्रैः पशुबान्धवैश्च।
पठेत्तु सौख्यं भुवि भोगयुक्तः प्राप्नोति निर्वाणपदं तदन्ते ॥९ ॥
कोणस्थः पिंगलो बभ्रुः कृष्णो रौद्रोऽन्तको यमः।
सौरिः शनैश्चरो मन्दः पिप्पलदेन संस्तुतः ॥१०॥
एतानि दश नामानि प्रातरुत्थाय यः पठेत्।
शनैश्चरकृता पीडा न कदाचिद्भविष्यति ॥११॥

इति श्रीशनैश्चरस्तोत्रं संपूर्णम्।

शनिस्तोत्रम्।

ॐ शनैश्चरः स्वधाकारी छायाभूः सूर्यनन्दनः।
मार्तण्डजो यमः सौरिः पंगुश्च ग्रहनायकः ॥१॥
ब्रह्मण्योऽक्रूरधर्मज्ञो नीलवर्णोऽञ्जनद्युतिः।
द्वादशैतानि नामानि त्रिसंध्यं यः पठेन्नरः ॥२॥
तस्य पीडां न चैवाहं करिष्यामि न संशयः।
गोचरे जन्मलग्ने वा दशास्वंतर्दशासु च ॥३॥

इति शनैश्चरस्तोत्रम् समाप्तम्।

श्रीशनैश्चरजी की आरती

जय जय श्रीशनिदेव भक्तन हितकारी ।
सूरज के पुत्र प्रभु छाया महतारी ॥ जय जय --
श्याम अंग वक्र दृष्टि चतुर्भुजाधारी ।
नीलाम्बर धारी नाथकी शोभा अति भारी ॥ जय जय --
भव्य मुकुट शीश राजत दीपत लिलारी ।
मुक्तन की माला गले शोभित बलिहारी ॥ जय जय --
मोदक मिष्टान्न पान चढ़त हैं सुपारी ।
लोहा तिल तेल उडद महिषी अति प्यारी ॥ जय जय --
देव दनुज ऋषि मुनि सुमिरत नर नारी ।
भक्तगण धरत ध्यान शरण आते तुम्हारी ॥ जय जय --

॥ इति श्रीशनैश्चरजी की आरती ॥

हमारी सभी पुस्तकें मिलने के स्थान

खेमराज श्रीकृष्णदास -
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
९१/१०९, खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
७वी खेतवाडी बॅक रोड कार्नर, मुंबई-४०० ००४.
दूरभाष / फैक्स - ०२२-३८५७४५६.

खेमराज श्रीकृष्णदास -
६६, हडपसर इण्डस्ट्रियल इस्टेट,
पुणे-४११०१३.
दूरभाष-०२०-६८७१०२५,
फैक्स - ०२०-६८७४९०७.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,
लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस व बुक डिपो -
अहिल्याबाई चौक, कल्याण, जि. ठाणे,
महाराष्ट्र -४२१ ३०१.
दूरभाष/फैक्स- ०२५१-२०९०६१.

खेमराज श्रीकृष्णदास -
चौक, वाराणसी (उ.प्र.) २२१ ००१.
दूरभाष - ०५४२- ४२००७८.

मुद्रक एवं प्रकाशकः

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

KHEMRAJ SHRIKRISHNADASS